राष्ट्रपति के अभिभाषण पर प्रस्ताव

†**अध्यक्ष महोदय:** अब सभा श्री कासलीवाल द्वारा १३ फरवरी, १६५६ को प्रस्तुत निम्नलिखित प्रस्ताव तथा तत्सम्बन्धी संशोधनों पर और आगे विचार करेगी :—

> "कि इस सत्र में समवेत लोक-सभा के सदस्य, राष्ट्रपति के उस अभिभाषण के लिये, जो उन्होंने ६ फरवरी, १६५६ को एक साथ समवेत संसद् की दोनों सभाओं के समक्ष देने की कृपा की है, उनके अत्यन्त आभारी हैं।"

†**प्रधान मंत्री तथा वैदेशिक-कार्य मंत्री (श्री जवाहरलाल नेहरू):** सबसे पहले मैं सभा से इस बात के लिये क्षमा मांगना चाहूंगा कि मैं इस प्रस्ताव से सम्बन्धित पूरी चर्चा में उपस्थित नहीं रह सका वजह यह थी कि एक दिन तो मैं दिल्ली में ही नहीं था, और बाकी दूसरे दिनों मेरे पास काम बहुत ज्यादा था। हां, कुछ देर तक मैंने चर्चा सुनी थी। फिर भी, मैंने अपने यहां हाजिर न रह पाने की कमी बहुत कुछ दूर करने की कोशिश की है। मैंने माननीय सदस्यों के भाषणों खास तौर से विरोधी दल के खास-खास माननीय सदस्यों के भाषणों के सरकारी रिकार्ड को पूरी तरह से पढ़ लिया है।

सबसे पहली चीज़ तो यह है कि माननीय सदस्य शायद ठीक-ठीक नहीं समझते, उन्हें कुछ गलत-फहमी है कि दोनों सभाओं के इस संयुक्त सत्र के सामने दिये जाने वाले राष्ट्रपति के अभिभाषण को किस ढंग का होना चाहिये। हर साल इस मौके पर ऐसी ही ग़लतफ़हमी दिखाई पड़ती है। श्री डांगे ने कहा है कि अभिभाषण बड़ा बेजान था, उससे कोई उत्साह ही पैदा नहीं होता। श्री खाडिलकर ने फरमाया है कि अभिभाषण में कोई दम ख़म नहीं थी और न उसे सुन कर किसी एक चीज़ पर कमर कसने का जज्बा पैदा होता है। उनका अपना ख्याल है कि अभिभाषण में देश के मसलों की छानबीन करने की, कोशिश होनी चाहिये; यह बताया जाना चाहिये कि सरकार ने कहां-कहां ग़लतियां की हैं। मेरा ख्याल है कि मैं भी यहां जो कुछ कहने जा रहा हूं उससे श्री डांगे के दिल में कोई उत्साह पैदा नहीं होगा। इसलिये कि श्री डांगे का उत्साह, उनकी प्रेरणा जिन चीजों से जागती है उनका खजाना मेरे पास नहीं है। लेकिन श्री खाडिलकर ने जो भी कुछ उम्मीद राष्ट्रपति के अभिभाषण से लगा रखी थी, उससे तो यही लगता है कि वह हमारे देश के राष्ट्रपति और अमरीका के प्रेसीडेण्ट के पद और उनकी स्थिति में कोई फर्क नहीं समझते। दोनों को एक ही जैसा समझते हैं। अमरीका के प्रेसीडेण्ट अपने राज्य-संघ के नाम कभी-कभी जो संदेश देते हैं उसमें वे देश के सामने आने वाले प्रश्नों की छानबीन करके उनका लेखा-जोखा करते हैं। लेकिन हमारे राष्ट्रपति न तो संविधान की रू से और न अन्य प्रकार से अमरीकी प्रेसीडेण्ट की तरह काम करने की स्थिति में हैं। इसलिये यह उचित नहीं है कि हम उनसे संविधान द्वारा तय किये गये ढंग के अलावा और किसी ढंग से काम करने की उम्मीद करें। इसीलिये उनका वार्षिक अभिभाषण ऐसी कोई गहरी छानबीन पेश नहीं करता, और न लेखा जोखा करता है, न गलतियां ढूंढता है। उसमें एक मोटे तौर पर यही बताया जाता है कि सरकार ने एक साल में क्या किया है और आगे चल कर क्या खास-खास चीज़ें की जायेगी। अगर हम चाहते हैं कि इस मामले में कोई दूसरा ही ढंग अपनाया जाये, तो वह न तो संविधान की भावना से मेल खायेगा और न राष्ट्रपति के उस ओहदे से मेल खायेगा जो हमने मंजूर किया है।

इस सभा में कई भाषण दिये गये हैं और उन में कई तरह की बातें कही गई हैं। श्री मथाई के मामले के बारे में कई बार जिक्र किया गया है। और कई विषयों के बारे में कहा गया है। खास तौर पर एक विषय ऐसा है जिस का इस सभा में पहले कभी भी जिक्र नहीं किया गया था। देश में गृह-युद्ध हो सकने की संभावना की बात कभी इस से पहले नहीं की गई थी। इस तरह इस वाद-विवाद

---

†मूल अंग्रेजी में

में काफी फैलाव आ गया है । मैं उन में से कुछ बातों को ही लेता हूं क्योंकि यदि उन सभी के बारे में मैं अपने ख्यालात ज़ाहिर करने लगूं तो बहस जरूर लम्बी हो जायेगी, पर उस से कुछ फायदा नहीं होगा ।

श्री मथाई के मामले को ले कर कई विरोधी दल के माननीय सदस्यों के दिमाग़ बड़ी परेशानी में पड़े हुए हैं । इसलिये मैं सब से पहले उसी के बारे में कहता हूं । माननीय सदस्यों के दिमाग़ में जिस किसी भी मामले के बारे में कुछ स देह पैदा हों, मैं उस की हर तरह से जांच कराने के लिये तैयार हूं । सभा में या सभा के बाहर भी, जब भी मुझ से कुछ सवालात पूछे जाते हैं, मैं हमेशा ही उन के बारे में सारी जानकारी देने के लिये, उतनी जानकारी, जितनी मुझ है, देने के लिये तैयार रहता हूं । यहां इस सभा में, और राज्य सभा में भी मैंने कुछ सव लों के जवाब देने की कोशिश की थी । ज हिर है कि मैं उस मामले का पूरा किस्सा और उस से ताल्लुक रखने वाले सभी मामलों को बयान नहीं कर सकता था । जब मैं ने देखा कि लोगों की और इस सभा के सदस्यों की इस मामले में जो दिलचस्पी है उस को देखते हुए और कुछ माननीय सदस्यों द्वारा लगाये गये कुछ आरोपों और कुछ आक्षेपों को देखते हुए, यही अच्छा होगा कि इस पूरे मामले के पूरे किस्से की इस से ताल्लुक रखने वाली सभी चीज़ों की काफी गहराई से जांच करवाई जाये, तो मैं ने अलग-अलग सवालों के जवाब में थोड़ी-बहुत जानकारी जुटाना बन्द कर दिया । उस से माननीय सदस्यों को संतोष भी नहीं हो रहा था । कुछ सवालात तो बड़े ही अजीब से थे । अजीब इसलिये कि वे सवाल थे ही नहीं । वे सवालों से कुछ और बढ़ कर थे । इस मामले के बारे में जितने भाषण हुए थे, उन को सुनने से भी ऐसा लगता है जैसे कि सभी लोग यह समझते हैं कि कोई बड़ी भारी बात हो गई है, लेकिन इस बात का इन्तजार करना किसी ने ठीक नहीं समझा कि पहले तथ्यों का तो पता लगा लिया जाये । इसलिये मैं ने यह तय किया इस पूरे मामले पर किसी ऐसे व्यक्ति को विचार करना चाहिये जो एक पूरी रिपोर्ट तैयार कर दे और फिर हम उस पर विचार कर सकें और, तभी हम सोचें कि इस मामले में आगे क्या कदम उठाया जाना चाहिये । इसलिये मैंने अपने मंत्रि-मंडल सचिव से कहा कि वह सभी तथ्यों का पक्के तौर पर पता लगा कर एक प्रतिवेदन तैयार करें । मैंने उन से कहा था कि वह इस मामले के सिलसिले में किये गये सभी आरोपों, चाहे वे सभा में किये गये हों या समाचारपत्रों में उठाये गये हों, को देखें और उन की जांच करें और मुझे रिपोर्ट दें ताकि उस रिपोर्ट को या उस जानकारी के आधार पर अपनी खुद की रिपोर्ट आप को दे सकूं । सचिव वह रिपोर्ट तैयार कर रहे हैं । अब चीज़ यह है कि इस मामले में कुछ ऐसे सवाल कुछ ऐसे पहलू भी हैं जिन का सीधा सम्बन्ध वित्तीय मामलों से है । इसलिये मैं चाहता हूं कि उस रिपोर्ट के आने पर, मैं उस की एक-एक कापी वित्त मंत्री और महानियंत्रक तथा लेखा-परीक्षक के पास भेज दूं, जिस से कि वे इस मामले के वित्तीय पहलू पर विचार कर के यह बता सकें उस में कितना और कहां तक कुछ अनुचित हुआ है ।

जब भी दो आदमी एक-दूसरे के बहुत ही क़रीबी बन कर रहते हैं, तो उस के दो ही नतीजे हो सकते हैं । एक तो यह है कि करीब रहने की वजह से वे दोनों एक-दूसरे को बहुत अच्छी तरह जान-समझ लेते हैं और एक-दूसरे की अच्छाई-बुराइयों को अन्य लोगों के मुकाबिले कहीं अच्छी तरह समझ सकते हैं और उन की ठीक जांच कर सकते हैं । और दूसरा नतीजा यह भी होता है कि वे दोनों एक दूसरे की तरफदारी ले सकते हैं । पहले नतीजे से तो फायदा होता है, लेकिन दूसरे से नुकसान । इसलिये, जो भी हुआ हो, मैंने तय यही किया कि इस मामले की सचाई पता लगाने के रास्ते में मेरी अपनी ज़ाती रायों को रोड़ा नहीं बनना चाहिये । और इसलिये, मैंने तय किया है कि मंत्रि-मंडल सचिव की रिपोर्ट आने के बाद मैं अपने सहयोगी, वित्त मंत्री से उन की अपनी राय बताने के लिये अनुरोध करूंगा और साथ ही महालेखापरीक्षक से भी पूछूंगा कि इस मामले में कुछ अनुचित कार्य

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

हुआ है या नहीं । चूंकि मैं चाहता हूं कि इस मामले की जांच पूरे तौर पर हो, और जांच में उस पूरे वक्त को लिया जाये जब से कि श्री मथाई मेरे साथ रहे हैं, यानी पूरे १२ साल के दौर की जांच की जाये, इसीलिये इस में कुछ वक्त तो लग ही जायेगा ।

मेरे पास काम करने आने से पहले श्री मथाई क्या करते थे, इस से मुझे कोई दिलचस्पी नहीं है । मुझे तो सिर्फ उतने ही वक्त के उन के कामों से दिलचस्पी है जितने तक कि वह मेरे पास रहे । शायद माननीय सदस्यों की यह नहीं मालूम कि श्री मथाई एक ऐसे वक्त मेरे पास आये थे जबकि मेरे किसी सरकार में शामिल होने की बात तक नहीं चल रही थी । वह मेरे प्रधान मंत्री बनने के करीब डेढ़ साल पहले मेरे पास आये थे । उस समय ऐसी कोई बात नहीं थी कि वह एक भावी प्रधान मंत्री अथवा सरकारी पदाधिकारी के पास नियुक्त हो रहे हैं । इसीलिये मैंने मंत्रिमंडल सचिव से कहा है कि वह श्री मथाई के उस पूरे काल को ही लें जितने तक कि वह मेरे पास रहे हैं, ताकि पूरी स्थिति की मोटे तौर से और श्री मथाई पर जो आरोप लगाये गये हैं, उन की खास तौर से जांच हो सके ।

†**श्रीमती रेणु चक्रवर्ती** (बसिरहाट) : क्या इस का मतलब यह है कि इस से पहले श्री मथाई ने अमरीकी सेना के संस्थान में काम करते समय २ या ३ लाख रुपये की जो कमाई की थी, उस की जांच नहीं होगी ?

†**श्री जवाहरलाल नेहरू** : जी, हां । ठीक यही मतलब है । मैं उस की जांच नहीं कराऊंगा । यह एक बिलकुल ही अलग मामला है; मैं हर आदमी की अपनी निजी ज़िन्दगी के बारे में जांच कराता नहीं घूम सकता । हां, लेकिन इस बात में मेरी और सभा की दिलचस्पी जरूर है कि जब से श्री मथाई मेरे साथ रहे, या सरकारी सेवा में रहे, तब से क्या-क्या हुआ है ।

मैं फिर दोहराना चाहता हूं कि मैं इस बात को पसन्द करता हूं कि माननीय सदस्य ऐसे सभी मामलों में दिलचस्पी दिखायें जिन के बारे में कि उन के दिमाग में संदेह पैदा होते हैं, या जिन में वे समझते हों कि उचित ढंग से काम नहीं हुआ है । यह तो ठीक है । लेकिन साथ ही, इस मामले के सिलसिले में माननीय सदस्यों ने जिस ढंग से सवालात उठाये हैं, और जिस तरह से किसी के पीछे पड़ जाने की झलक दिखाई देती है उस पर मुझे बड़ा ताज्जुब है । मेरा तो ख्याल है कि माननीय सदस्य यह बिलकुल नहीं चाहते कि हाथ धो कर किसी के पीछे पड़ा जाये । लेकिन इस मामले में कुछ ऐसा ही नज़र आया है । माननीय सदस्य सचाई का पता लगाना चाहते हैं, वे चाहते हैं कि न्याय किया जाये । वे चाहते हैं कि नेकनीयती और ईमानदारी का मेयार ऊंचा रहे । मुझे पूरा यकीन है कि कोई भी माननीय सदस्य ऐसे मामलों में किसी के पीछे हाथ धोकर नहीं पड़ना चाहता । समाचारपत्रों में ऐसे मामलों को सनसनीखेज़ ढंग से पेश करने का रुझान रहा है । मैं आप के सामने एक सचाई, एक तथ्य पेश कर रहा हूं, किसी की शिकायत नहीं ।

मैं आप के सामने एक और छोटा सा उदाहरण रखता हूं । अभी कुछ दिन पहले एक पत्रिका में एक पत्र प्रकाशित किया गया था, जो श्री मथाई ने नौ साल पहले लिखा था । सच्ची बातें छापने के लिये उस पत्रिका का नाम कोई बहुत ज्यादा नहीं है । श्री मथाई का वह पत्र श्रीमती रामेश्वरी नेहरू के नाम लिखा गया था । चूंकि श्री मथाई का मामला लोगों के सामने था, सिर्फ इसीलिये वह पत्र छापा गया था । पता नहीं उस पत्रिका को वह मिला कहां से । पत्रिका में कुछ इस तरह कहा गया था कि शायद वह पत्र रद्दी में किसी मिठाई वाले के यहां से मिला था । शायद ऐसे ही मिला हो ।

---

†मूल अंग्रेजी में

उस पत्र में, श्री मथाई ने कहा था कि प्रधान मंत्री ने उन को सहायता के लिये पांच हजार रुपये का चैक भेजने के लिये कहा है और इस बात पर खेद प्रकट किया है कि नियमित रूप से वह रुपया नहीं भेज सकेंगे ।

अधिकांश माननीय सदस्य श्रीमती रामेश्वरी नेहरू को जानते हैं । वह दिल्ली के सम्माननीय व्यक्तियों में गिनी जाती हैं । उस समय श्रीमती रामेश्वरी नेहरू पाकिस्तान से आने वाले विस्थापितों, विशेष कर स्त्रियों के लिये सहायता-कार्य में जुटी हुई थीं । वह पुनर्वास मंत्रालय की अवैतनिक सलाहकार भी थीं । मंत्रालय विस्थापितों की मदद कर रहा था । जब भी कोई फौरी जरूरत आ पड़ती थी, तो वह मेरे पास दौड़ती थी । उन का कहना था कि सरकार बड़ी देर में, बड़े बड़े धीरे-धीरे चलती है, और मदद की जरूरत फौरन होती है । तब मैं उन को कुछ राशि दे दिया करता था, और श्रीमती रामेश्वरी नेहरू उस का पूरा हिसाब दे देती थीं । मैंने उन को इसी सहायता कार्य के लिये वे पांच हजार रुपये दिये थे । इस पत्रिका में ऐसी ही चीज़ छापी जाती है । उस पत्रिका का इशारा शायद यह है कि श्रीमती रामेश्वरी नेहरू मेरे एक रिश्ते के भाई की स्त्री हैं और मैं इसीलिये उन को सरकारी खजाने से एक तरह की पेन्शन सी देता रहता था । (अन्तर्बाधा)

अब श्री मसानी का भाषण लीजिये । मैं उन के भाषण के समय यहां नहीं था, लेकिन मैंने सरकारी रिपोर्ट में उस का एक-एक हरफ पढा है । मैं यहां इस संसद् में ग्यारह साल से हूं, लेकिन इस पूरे अर्से में पहली बार मैंने ऐसी बातें पढ़ी या सुनी हैं । वह एक बिलकुल ही नया तजुर्बा था । नया इस बात में कि किसी भी माननीय सदस्य ने इस से पहले कभी भी ऐसी बात नहीं कही थी कि अगर एक कुछ काम किया जायेगा तो देश में गृह-युद्ध छिड़ जायेगा । ऐसी धमकी कभी पहले सुनने में में नहीं आई थी ।

†**श्री मी० रु० मसानी** (रांची-पूर्व) : मैंने कोई भी धमकी नहीं दी थी, सिर्फ सावधान किया था । प्रधान मंत्री मेरे भाषण को पढ़ें । मैंने कहा यह था कि मुझे डर है कि कहीं गृह-युद्ध न छिड़ जाये । रांची और छोटा नागपुर के किसानों से उन की जमीनें दे देने के लिये कहा जा रहा है, इस का नतीजा खून-खराबी ही हो सकता है । इसीलिये मैंने सरकार को एक चेतावनी दी थी । इस से ज्यादा कुछ नहीं ।

†**श्री जवाहरलाल नेहरू** : मेरे पास श्री मसानी के भाषण के उद्धरण मौजूद हैं । उन्होंने एक नहीं बल्कि कई बार गृह युद्ध का जिक्र किया था । उन्होंने यह कहा था कि अगर देश में सहकारी कृषि अपनाई गई, तो वह धमकी या ज़ोर के बल पर ही की जायेगी । उन्होंने कहा था कि वह बिना किसी हिचक के कहना चाहते हैं कि यदि इस को थोपने की कोई बहुत ज्यादा कोशिश की गई, तो उस से गृह-युद्ध छिड़ जायेगा और खून खराबी होगी और उस में देश के हजारों लोगों को जान से हाथ धोना पड़ेगा । उन्होंने यह भी कहा था कि हम ऐसे किसी भी काम के लिये वचन-बद्ध नहीं होंगे ।

†**श्री मी० रु० मसानी** : मैं चाहता हूं कि प्रधान मंत्री सहकारी कृषि के बारे में ही बहस करें; इस बात को लेकर मूल प्रश्न को भुलाने की कोशिश न करें ।

†**श्री जवाहरलाल नेहरू** : माननीय सदस्य का दूसरा उद्धरण उन के अपने निर्वाचन क्षेत्र के बारे में था, जहां के आदिवासियों के साथ उन का बड़ा गहरा ताल्लुक है । उन के बारे में, माननीय सदस्य ने कहा थां कि हम चाहे जो नारा लगायें पर आदिवासी अपनी ज़मीन नहीं छोड़ेंगे ।

†**श्री मी० रु० मसानी** : वह पाठ शुद्ध नहीं है । मेरे पास उस की शुद्ध की गई प्रति मौजूद है ।

---

†मूल अंग्रेजी में

†**श्री जवाहरलाल नेहरू** : और आगे, माननीय सदस्य ने कहा था कि रांची और छोटा नागपुर के किसानों से उनकी अपनी ज़मीनें छोड़कर चीन की तरह बड़ी-बड़ी सहकारी समितियां बनाने के लिये कहा जा रहा है और इसका नतीजा यही होगा कि खून-खराबी होगी ।

मुझे बड़ी खुशी है कि श्री मसानी अब अपने भाषण को शुद्ध करना चाहते हैं ।

†**अध्यक्ष महोदय** : कोई भी माननीय सदस्य अपने भाषण को, उसकी शब्दावली को बदल नहीं सकत । यदि उसमें कुछ आपत्तिजनक हो, तो अध्यक्ष ही उसे निकाल सकता है ।

अब इस विषय पर अधिक बहस की जरूरत नहीं है ।

†**श्री जवाहरलाल नेहरू** : मुझे उनके किसी एक शब्द से दिलचस्पी नहीं है । अगर कोई शब्द छूट गया हो, तो वह जोड़ सकते हैं । मुझे तो उनके भाषण की बुनियादी बात से मतलब है । मैं आपको बता दूं कि गृह-युद्ध की संभावना की बात पढ़ कर सचमुच मुझे बड़ा दुःख हुआ । इससे पहले मैंने गृह-युद्ध की बातें तो सुनी थीं, लेकिन इस सभा से बाहर, सभा में नहीं । और अब इस सभा में भी इसका जिक्र किया जाने लगा है । मैं समझता हूं कि यह अच्छी चीज़ नहीं है, बुरी चीज़ है, क्योंकि हमें कुछ बुनियादी चीजें तो ध्यान में रखनी ही चाहिये और ऐसी बातें नहीं कहनी चाहिये जिनसे कि हालत और भी बिगड़ने का अंदेशा हो, या जनता का दिमाग ग़लत दिशाओं में बढ़ता हो । हमें इनना ध्यान रखना ही चाहिये । इतनी बात हमेशा अपने सामने रखनी चाहिये, फिर चाहे कुछ सवालों के बारे में हमारे दिमाग में कितनी ही उथल-पुथल या परेशानी क्यों न हो और हम सभा में उन सवालों के बारे में कितनी ही गरमागर्मी क्यों न कर लें । वैसे ही हमारे सामने इतनी मुश्किलात हैं, मेरा मतलब है कि देश के सामने इतनी ज्यादा कठिनाइयां हैं । इसीलिये, हमें एक-दूसरे की नीतियों की आलोचना करने, नुक्ताचीनी से तो नहीं हिचकना चाहिये, लेकिन इस ढंग सें बातें कहने को बढ़ावा नहीं देना चाहिये ।

श्री मसानी को इतनी परेशानी आखिर क्यों है ? उनकी परेशानी की वजह यह है कि कांग्रेस के नागपुर अधिवेशन में जो कई संकल्प पास किये गये हैं, उनमें भूमि-सुधारों और सहकारी समितियों के बारे में भी संकल्प हैं । उन संकल्पों में कहा गया है कि हमारा उद्देश्य है संयुक्त कृषि और हमें इसी उद्देश्य को सामने रखकर चलना चाहिये, लेकिन अभी तीन साल तक अपनी सारी कोशिशें सेवा सहकारी समितियों पर ही लगानी चाहिये । उनमें इस बात पर भी ज़ोर दिया गया है कि सहकारी कृषि के लिये यह सहयोग किसानों की अपनी मरज़ी के मुताबिक ही होगा और यदि संयुक्त कृषि शुरू हुई तो किसानों की अपनी मरज़ी से ही होगी । श्री मसानी ने भाषण में कहा था कि वह तो हमेशा से सहकारिता के सिद्धान्त के हामी रहे हैं, लेकिन कांग्रेस के संकल्पों में जिसकी बात की गई है, उसका सहयोग से कोई मतलब ही नहीं है क्योंकि संयुक्त कृषि होने से किसानों के हाथ से ज़मीन तो जाती ही रहेगी और इसीलिये उसे सहयोग नहीं कहा जा सकता । उनका कहना है कि किसी भी प्रक्रम पर संयुक्त कृषि चलाई जायेगी, तो वह आगे चल कर सामहिक कृषि की शक्ल ही ले लेगी । और सामूहिक कृषि का नतीजा होगा इस देश में भी वैसे हो खौफनाक हालात, बन जाना जैसे कि अभी रूस और चीन में हैं । यही उनकी दलील है ।

लेकिन इस दलील में कई ऐसी चीज़ें पहले से मान ली गई हैं, जिनका कोई आधार ही नहीं है । इसलिये उसका जवाब देना कुछ मुश्किल हो गया है । श्री मसानी यह मान कर चलते हैं कि

---

†मूल अंग्रेजी में

जहां संयुक्त कृषि से काम होगा वहां सहकारिता नहीं हो सकती। मैं पहली बार ऐसा सिद्धान्त सुन रहा हूं। इससे पहले भी मैंने संयुक्त कृषि के बारे में तरह-तरह की बातें सुनी थीं, लेकिन यह किसी ने भी नहीं कहा था। फिर, उनकी दलील के मुताबिक अगर संयुक्त कृषि चलेगी तो आगे बढ़कर वह सामूहिक खेती की शक्ल ले लेगी। यह बात भी कुछ बड़ी अजीब सी लगती है। जहां तक मेरा अपना ताल्लुक है, मैं एक मोटे तौर पर सामूहिक खेती को ठीक नहीं मानता। मैं साफ़ कहना पसन्द करता हूं और मैं कहता हूं कि मैं सामूहिक खेती से सहमत नहीं हूं, लेकिन अगर कुछ लोग उसे पसंद करते हैं, तो करें। वे सामूहिक खेती करें, मैं उनके रास्ते में अड़चनें नहीं डालूंगा, लेकिन हां उसे बढ़ावा भी नहीं दूंगा। लेकिन सहकारिता मैं तो मैं यकीन करता हूं, और संयुक्त कृषि को भी कतई ठीक समझता हूं। मैं इसे छिपाना नहीं चाहता। मैं खेत-खेत में जाकर हर किसान से संयुक्त कृषि अपनाने के लिये कहूंगा, लेकिन अगर वे राजी नहीं होंगे, तो मैं इसे उन पर थोप भी नहीं सकता। राजी होना या न होना, तो उनकी खुशी पर है। मैं यह भी नहीं कहता कि इस मामले या किसी और मामले में भी किसी आम उसूल को दुनिया के हर मुल्क पर लागू किया जा सकता है। मेरा तो अब यह यकीन है कि दुनिया के सभी मुल्कों के बारे में, या किसी एक नीति के बारे में, आम तौर से कोई एक बात कहना ठीक नहीं है। हमारे अपने नजरिये के कुछ आम उसूल हों, हो सकते हैं, और होते भी हैं, लेकिन उन्हें हर मुल्क पर तो लागू नहीं किया जा सकता। हर मुलक के अपने खास हालात होते हैं, और उन्हें देखकर उनके आधार पर ही हम उस एक मुल्क के बारे में कोई नतीजा निकाल सकते हैं। किसी एक मुल्क का कोई उसूल लेकर ज्यों का त्यों दूसरे मुल्क पर लागू नहीं किया जा सकता। यदि मैं भारत के किसानों के बारे में कोई एक चीज़ करने का सुझाव देता हूं, तो उसका मतलब यही है कि मैं उसे भारत के हालात में फायदेमन्द और सही समझता हूं। आज दुनिया इतनी तेजी से बदलती जा रही है कि यह कहना मुश्किल है कि आज से चन्द बरस बाद मैं क्या सोचूंगा या यह कि दूसरे लोग किस तरह से सोचेंगे। दुनिया में बड़ी तेजी से तब्दीलियां होती जा रही हैं।

श्री मसानी ने कहा कि वह परम्परागत तरीकों को बदलने के विरुद्ध हैं। उन्होंने कहा कि वह चाहते हैं कि परम्परागत पारिवारिक कृषि, वैयक्तिक कृषि जारी रहे। मैं यह बता दूं कि मैं परम्परा के विरुद्ध तो नहीं हूं परन्तु मैं समझता हूं भारत में एक चीज़ जो ज़रूरी है वह यह है कि परम्परा से यथासंभव बाहर निकला जा सके। मैं समस्त पराम्पराओं के सम्बन्ध में नहीं कह रहा हूं—वैसा कहना उचित नहीं होगा—परन्तु इतना ज़रूर है कि हम कुछ बातों में परम्परावादी, रुढ़िवादी बन गये हैं। मैं श्री मसानी से कितना भी मतभेद रखूं लेकिन मैं समझता हूं कि इस अर्थ में वह रुढ़िवादी और परम्परावादी नहीं हैं।

इसलिए हमें इस प्रश्न पर उसके गुण-दोषों के आधार पर यह महसूस करते हुए विचार करना चाहिए कि हमें सहकारिता के इस क्षेत्र में जो कुछ भी करना है वह सम्बन्धित लोगों की सहर्ष स्वीकृति से होना चाहिए अन्यथा अच्छी अथवा बुरी होने के अतिरिक्त वह सहकारिता न होगी वरन कुछ और ही होगी; मैं श्री मसानी से इस बात में सहमत हूं। यदि वह मान लिया जाय तो श्री मसानी द्वारा हमारे समक्ष प्रस्तुत तर्कों में से अधिकांश व्यर्थ हो जायेंगे।

उन्होंने बड़े जोश के साथ यह भी कहा कि इस प्रकार की खेती से संसार में कहीं भी अधिक उत्पादन नहीं हुआ है। यहां फिर मैं समझता हूं कि इस प्रकार की सामान्य बातें कहना सही नहीं है। मैं उन्हें ऐसे दृष्टान्त दे सकता हूं जहां यह सफल रही है, परन्तु उसे छोड़िये। वह उदाहरण देते हैं कि यूगोस्लाविया और पोलैण्ड में क्या हुआ; वहां सामूहिक खेती को छोड़ देना पड़ा।

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

परन्तु यहां फिर वह देखेंगे कि उन्होंने दो सर्वथा भिन्न बातों को मिला दिया। उन्होंने एक का उदाहरण दिया और उसे दूसरे पर लागू कर दिया। यह तर्क का विचित्र ढंग है। पहले वह कहते हैं कि हमने जिस प्रकार की संयुक्त कृषि का प्रस्ताव किया है वह सामूहिक कृषि है और फिर वह कहते हैं कि सामूहिक कृषि कहीं अन्यत्र असफल रही है और इसलिए संयुक्त कृषि यहां भी असफल रहेगी। इससे पता लगता है कि उनके विचारों में कितनी अस्पष्टता है, चाहे वह अस्पष्टता अचेतन हो अथवा चेतन।

मैं यहां कोई यूगोस्लाविया अथवा पोलैण्ड अथवा सोवियत संघ अथवा चीन की बात तो नहीं कर रहा हूं। मैं दूसरे देशों में होने वाली बहुत सी बातों को पसंद नहीं करता और कई बातें पसंद भी करता हूं। कभी-कभी कोई व्यक्ति किसी प्रसंग विशेष में अपना मत प्रकट करता है, परन्तु मैं सदा वैसा करने में संकोच करता हूं क्योंकि जब तक कोई बहुत ऊंचे सिद्धान्त का मामला न हो मैं वास्तव में अपने को अन्य देशों का निर्णय करने में समर्थ नहीं समझता हूं। मुझे समस्त तथ्यों, परिस्थितियों और प्रसंग की जानकारी नहीं है और किसी समाचारपत्र अथवा किसी प्रतिवेदन में प्रकाशित होने वाले कुछ तथ्यों के आधार पर निर्णय करना पर्याप्त नहीं है। मैं दूसरे देशों के लोगों से भी यह नहीं चाहता कि वह कुछ इधर उधर के तथ्यों के आधार पर हमारे देश के सम्बन्ध में निर्णय करने की गलती करें। इसलिए मैं यह नहीं कह सकता कि यूगोहलाविया, पोलैण्ड, सोवियत संघ अथवा चीन में ठीक काम हो रहा है या नहीं। वही लोग सही जानकारी रखते हैं।

परन्तु हमें भारत में जिस स्थिति का सामना करना है वह यह है कि औसतन यहां खेत बहुत छोटे-छोटे हैं। भारत का औसत शायद एक या दो एकड़ होगा। बहुत से लोगों के पास तो एक एकड़ भूमि भी नहीं है। आप उसका क्या करेंगे? यदि औसत खेत २० एकड़ या ५० एकड़ हो, तो सर्वथा भिन्न स्थिति होगी। तब हमें दूसरी तरह सोचना होगा। मुझे संयुक्त कृषि अथवा किसी अन्य चीज़ का उसके नाम के कारण कोई आकर्षण नहीं है। आपको वहां काम करने, भूमि को सुधारने का मौका मिलता है। परन्तु वह व्यक्ति क्या कर सकता है जिसके पास कुल एक एकड़ के लगभग भूमि हो जैसी कि भारत में अधिकांश लोगों की स्थिति है? निस्संदेह, वह उसका सुधार कर सकता है। और, जैसा कि श्री मसानी ने हमें बताया, हम उसे अच्छे बीज दे सकते हैं, पानी दे सकते हैं, उर्वरक दे सकते हैं और अन्य औजार दे सकते हैं। निश्चय ही हम धीरे-धीरे ये चीज़ें उसे दे सकते हैं और ये चीज़े, जैसे भी हो, दी भी जानी चाहिए। पर इन चीज़ों को दिये जाने पर भी कुछ बातें ऐसी हैं जो छोटे-छोटे खेतों में संभव नहीं हो सकतीं। कुछ सुधार ऐसे हैं जिनका लाभ तभी हो सकता है जब खेतों का आकार काफी बड़ा हो। एक एकड़ भूमि का मालिक सदा गरीबी की हालत में रहेगा। यदि किसी फसल में पैदावार अच्छी हो गई तो उसे खोने को थोड़ा ज्यादा मिल जायेगा परन्तु फिर वह ढिलाई कर देगा। उसका भविष्य अनिश्चित रहता है। यह ठीक है कि इस समय बहुत से लोग भूमि पर अवलम्बित हैं और उन्हें अन्य व्यवसायों, अर्थात् उद्योग में लगाया जाना चाहिए, चाहे वह बड़ा हो, बीच के आकार का हो अथवा छोटे पैमाने का। परन्तु उन्हें भूमि से हटाकर उसका भार कम करना होगा। यह सही है, और हमें अधिकाधिक उत्पादन में सहायता देने के लिए प्रत्येक कार्य करना है। परन्तु मेरा निवेदन है कि भारत की परिस्थितियों में संयुक्त कृषि ही सही लक्ष्य है, चाहे हम सैद्धान्तिक दृष्टिकोण से उसे देखें अथवा अन्यथा।

यहां फिर इसका तात्पर्य सहमति से है, अन्यथा नहीं और, सैद्धान्तिक दृष्टिकोण के अतिरिक्त, यदि आप व्यवहारिक तौर पर भी इस की परीक्षा करें तो भी आप इसी निष्कर्ष पर पहुंचेंगे। मैं भली प्रकार जानता हूं कि किसान कट्टर होते हैं और यदि मैं चाहूं कि वे अपनी आदत बदलें तो

सरलता से वैसा नहीं हो सकता । मुझे उनके समक्ष सफलता के उदाहरण रखने होंगे, सैद्धान्तिक भाषण मात्र नहीं । यदि मैं उनसे कहूं कि उसके पड़ोसी को इसमें सफलता हो रही है तो उन्हें अन्य किसी भी चीज़ की अपेक्षा अधिक विश्वास होगा । इसलिए अन्ततः यह प्रश्न भारत के किसानों पर निर्भर है, मुझ पर या श्री मसानी पर नहीं । उन्हें किसी काम के लिए सहमत कराने के लिए भरसक प्रयत्न करने होंगे ।

परन्तु इस बीच में जब हम कहते हैं कि अगले तीन वर्ष तक हमें सेवा सहकारिता समितियों पर ज़ोर देना चाहिए उससे स्वयं मालूम होता है कि हम जल्दबाज़ी नहीं कर रहे हैं । उन्हें अपनी सेवा सहकारिता समितियां बनानी चाहिए । संसद् द्वारा कोई अधिनियम पारित होने नहीं जा रहा है । यदि वे स्वयं उसे बदलना चाहते हैं तो उन्हें कौन रोक सकता है ? मैं पूछता हूं कि यदि आज कोई सहकारी समिति यह निर्णय करे कि वह संयुक्त खेती करेगी तो उसे कौन रोक सकता है ? उसे कोई नहीं रोक सकता । बल का कोई प्रश्न ही नहीं है । किसी नये कानून का कोई प्रश्न ही नहीं है । सहकारी समिति स्वयं उसके करने का निर्णय करती है । वास्तव में उनमें से अनेक ऐसा कर चुकी हैं । इसलिए मैं इस बात को ठीक नहीं समझता । सहकारी कृषि के विषय की चर्चा की जा सकती है कि उसमें लाभ है या नहीं । आप यह भी कह सकते हैं कि वह गेहूं की खेती के लिए उपयुक्त है, चावल की खेती के लिए उतनी नहीं । ये ऐसे मामले हैं जिन पर विचार किया जाना चाहिए—मैं यह समझता हूं । परन्तु मुझे जिस बात से आश्चर्य हुआ वह है श्री मसानी का भयानक दृष्टिकोण । श्री मसानी कृषि के सम्बन्ध में मुझ से भी कम जानकारी रखते हैं । मेरा अपने राज्य के किसानों के साथ कई वर्ष तक सम्पर्क रहा है, इससे अधिक जानकारी का दावा मैं भी नहीं करता । मैंने यह अनुभव किया कि उनकी उस प्रतिक्रिया का संयुक्त कृषि से कोई सम्बन्ध नहीं था । वह किसी वस्तु के, किसी भय के विरुद्ध प्रतिक्रिया थी जो इसके पीछे है । भविष्य में क्या होगा, यह न मैं जानता हूं और न श्री मसानी । परन्तु मैं इतना अवश्य जानता हूं कि संसार में और भारत में ऐसी बातें हो रही हैं जो हमारे देश के रूप को बदल रही हैं और उसे बहुत अधिक बदल देंगी । हम पुरानी परम्पराओं को अधिक नहीं चला सकते चाहे वह भूमि के सम्बन्ध में हों अथवा उद्योग के अथवा अन्य किसी चीज़ के । हमारे सामने भारत की ४० करोड़ जनता को आगे बढ़ाने की बड़ी समस्या है और इसके लिये अपनी यात्रा के दौरान हमें अनेक परिवर्तनों से गुजरना होगा ।

संयुक्त कृषि के सम्बन्ध में मैं सहकारी समितियों की वर्तमान स्थिति के सम्बन्ध में कुछ तथ्य बताना चाहूंगा । मैं छोटी-छोटी ग्राम सहकारिता समितियों के आंकड़े दे रहा हूं, संयुक्त कृषि के नहीं, १९५०-५१ के अन्त में इन समितियों की संख्या १,१६,००० थी । १९५६-५७ के अन्त में यह संख्या १,५९,००० थी । १९५८-५९ के अन्त में यह संख्या १,७९,००० थी । ये ग्राम समितियां हैं, बड़ी समितियां नहीं । ग्राम सहकारिता समितियों की सदस्यता १९५०-५१ में ५१½ लाख, १९५६-५७ में ९१ लाख और १९५७-५८ में ११० लाख थी और १९५८-५९ का अनुमान १३८ लाख है ।

अब बड़ी-बड़ी सहकारी समितियों को लीजिए । उनकी संख्या १९५६-५७ के अन्त में १,९१५ और १९५७-५८ में ४,५२९ थी और १९५८-५९ में ६,३१८ है ।

फिर, माननीय सदस्य शायद इन सहकारी समितियों द्वारा दिये गये ग्रामीण ऋण की राशि जानना चाहें । ग्रामीण ऋण का ८० प्रतिशत ग्राम सहकारी समितियों द्वारा दिया गया था । बड़ी समितियों ने केवल २० प्रतिशत दिया । १९५०–५१ में यह राशि २२.९ करोड़ रुपये थी, १९५५-५६ में ४९.६२ करोड़ रुपये, १९५६–५७ में ६३.३३ करोड़ रुपये, १९५७–५८ में

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

९६ करोड़ रुपये और १९५८–५९ में १३० करोड़ रुपये । इस सब से मालूम होता है कि सहकारी समितियों ने, विशेषकर छोटी समितियों ने, ठोस प्रगति की है, हालांकि मैं इस राशि को बहुत बड़ा नहीं कहता ।

†**आचार्य कृपलानी** (सीतामढ़ी) : ये ऋण समितियां हैं अथवा सेवा समितियां ?

†**अध्यक्ष महोदय** : बहुप्रयोजनीय ।

†**श्री जवाहरलाल नेहरू** : इनमें से बहुत सी ऋण समितियां हैं, परन्तु इन दिनों हम प्रत्येक समिति को बहुप्रयोजनीय बनाने का प्रयत्न करते हैं । इनमें सब प्रकार की समितियां सम्मिलित हैं ।

जहां तक संयुक्त सहकारी कृषि का सम्बन्ध है, प्रतिवेदन के अनुसार १९५७–५८ के अन्त में भारत में २,०२० सहकारी समितियां थीं । परन्तु मैं यह बता देना चाहता हूं कि 'सहकारी कृषि' (कोऑपरेटिव फार्मिंग) शब्दों का प्रयोग बहुत कुछ अनिश्चित अर्थ में किया जाता रहा है । कभी-कभी भूमि समिति की होती है, स्वामित्व समिति का होता है, परन्तु फिर भी खेती कुछ मामलों में अलग-अलग व्यक्ति के आधार पर होती है । यदि इस प्रकार की सहकारिता समितियों को सम्मिलित न किया जाये, अर्थात् उन समितियों को सम्मिलित न किया जाये जिनमें खेती वैयक्तिक आधार पर होती है, तो संयुक्त और सामूहिक कृषि समितियों की संख्या, जिनमें खेती संयुक्त रूप से की जाती है, १३५७ है, जिनमें ९६६ संयुक्त कृषि समितियां (ज्वाइंट फार्मिंग सोसाइटीज़) हैं और ३९१ सामूहिक कृषि समितियां (कलेक्टिव फार्मिंग सोसाइटीज़) । ये वर्तमान आंकड़े हैं ।

यह सच है, और मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि इनमें से कुछ समितियों का निर्माण भूमि सुधार विधान से बचने के लिए किया गया था ।

†**श्री च० कृ० नायर** (बाह्य दिल्ली) : इस 'सामूहिक कृषि' (कलेक्टिव फार्मिंग) से क्या मतलब है ?

†**श्री जवाहरलाल नेहरू** : मेरे पास एक प्रतिवेदन है, जिसमें इनमे से प्रत्येक सामूहिक समिति की चर्चा पृथक रूप से की गई है । उनमें अन्तर है । परन्तु मोटे तौर से मैं यह समझता हूं कि जहां उन्होंने 'सामूहिक' (कलेक्टिव) शब्द का प्रयोग किया है उसका अर्थ यह है कि भूमि पर सम्मिलित स्वामित्व है, अर्थात् प्रत्येक व्यक्ति का पृथक भाग नहीं है । मैं इसे ऐसा ही समझता हूं ।

मैं यह नहीं कहता कि ये समस्त १३०० के लगभग समितियां बहुत अच्छी अथवा सफल अथवा संयुक्त कृषि की आदर्श हैं । परन्तु प्रत्येक राज्य में सफल संयुक्त कृषि समितियों के उदाहरण मौजूद हैं । उनका जन्म गत दो या तीन वर्षों में हुआ है और उनका जन्म वास्तव में किसी के अत्यधिक दबाव से नहीं हुआ वरन विभिन्न कारणों से किसानों ने ही वैसा करने का निश्चय किया । योजना आयोग के कार्यक्रम मूल्यांकन संगठन* का "सहकारी कृषि का अध्ययन"** पर एक प्रतिवेदन है जो ढाई वर्ष पूर्व प्रकाशित हुआ था । उसमें इन समस्त समितियों पर पृथक रूप से विचार एवं उनका मूल्यांकन किया गया है । अब योजना आयोग द्वारा और आगे अध्ययन की व्यवस्था की जा रही है ।

---

†मूल अंग्रेजी में

*Programme Evaluation Organisation.

**Studies in Cooperative Farming.

भूमि की अधिकतम सीमाओं के सम्बन्ध में कुछ आलोचना हुई है। इस प्रश्न पर सदन म नहीं वरन् बाहर—अनेक वर्षों से कांग्रेस संगठन में और योजना आयोग में—विचार किया जाता रहा है। माननीय सदस्य जानते हैं कि योजना आयोग ने अपने प्रतिवेदनों और पंच वर्षीय योजनाओं में इसकी बार-बार सिफारिश की है। वास्तव में कुछ राज्य इस पर कार्यवाही शुरू भी कर चुके हैं।

सब से पहली बात मैं यह निवेदन करना चाहता हूं कि सहकारी कृषि अथवा अधिकतम सीमाओं सम्बन्धी ये निर्णय किसी एक व्यक्ति के मस्तिष्क से अचानक नहीं निकले हैं। इन चीजों पर कई वर्षों तक विचार हो चुका है। इस मामले में हमारी अत्यधिक धीमी गति के लिए जो हमारी आलोचना की गई है वह संभवतः ठीक ही है। फिर भी इन विषयों पर विचार किया गया है; विशेष समितियां नियुक्त की गई थीं जिनमें न केवल कांग्रेस के ही सदस्य थे वरन् बाहर के विख्यात अर्थशास्त्री भी थे जिन्होंने वे सिफारिशें कीं जिन पर पुनः चर्चा की गई। इस तरह जो निर्णय किये गये, वे, प्रश्न के प्रत्येक पहलू पर पर्याप्त चर्चा और विचार करने के बाद ही किये गये हैं।

एक बात मैं श्री मसानी के भाषण के सम्बन्ध में कहना चाहूंगा। उन्होंने कहा कि क्या सहकारिता और लक्ष्यों की बात करना व्यर्थ नहीं है? मैं उनके इस प्रश्न का तात्पर्य नहीं समझा सका। हम लक्ष्यों के साथ सहकारिता क्यों नहीं रख सकते?

†**श्री मी० रु० मसानी:** श्री गोमुल्का ने सिद्ध कर दिया है कि यदि आप स्वेच्छा से काम करवाना चाहते हैं तो लक्ष्य नहीं निर्धारित कर सकते क्योंकि वैसा करना मानवीय चेतना के विकास के लिये लक्ष्य निर्धारित करने के समान होगा।

†**श्री जवाहरलाल नेहरू:** माननीय सदस्य श्री गोमुल्का की आड़ में बचना चाहते हैं; श्री गोमुल्का एक विख्यात व्यक्ति हैं, परन्तु फिर भी मैं चाहता हूं कि माननीय सदस्य सामान्य ज्ञान का अधिक आश्रय लें। यदि मुझ से पूछा जाये कि आप भारतीय किसान की राजनैतिक, आर्थिक अथवा अन्य चेतना के विकास की क्या आशा करते हैं तो मैं उसका लक्ष्य कैसे निर्धारित कर सकता हूं। यह सर्वथा सत्य है परन्तु एक खेत के उत्पादन का लक्ष्य मैं निश्चय रूप से निर्धारित कर सकता हूं। मैं उसे प्राप्त न कर सकूं यह एक भिन्न मामला है परन्तु यह बात बहुत साधारण है जो की जा सकती है।

वास्तव में यह चीज़ एक व्यक्ति के खेत पर लागू होती है। सहकारिता को छोड़िये; हम १० एकड़ या कितने भी एकड़ के खेत का लक्ष्य निर्धारित कर सकते हैं या नहीं? मैं यह नहीं कहता कि कि लक्ष्य बिल्कुल सही हो जो अवश्य प्राप्त किया जाना चाहिए। परन्तु उसका निर्धारण हिसाब लगाने के पश्चात् ही किया जाता है और २० प्रतिशत या ३० प्रतिशत अधिक, चाहे जो भी हो, लक्ष्य निर्धारित किया जा सकता है। यदि हम एक व्यक्ति के खेत के सम्बन्ध में वैसा निर्धारण कर सकते हैं तो १० या २० खेतों को मिला कर वैसा क्यों नहीं कर सकते और उसे सहकारिता समिति क्यों नहीं कह सकते? मैं यह नहीं समझता। अन्यथा हमें यह कहना चाहिए कि हम किसी भी भूमि के सम्बन्ध में लक्ष्य निर्धारित कर ही नहीं सकते कि उसमें कितना उत्पादन होगा। यह एक अत्यन्त असाधारण बात होगी जो समस्त वैज्ञानिक, सांख्यकीय और हर प्रकार के दृष्टिकोण के प्रतिकूल होगी।

†**श्री मी० रु० मसानी:** मेरा तात्पर्य उन ३००० सहकारी फार्मों के लक्ष्य से था जिनका निर्माण दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्त तक किया जाना है तथा जिनमें से ६०० का निर्माण वित्तीय वर्ष १९५८–५९ के अन्त तक अवश्य हो जाना चाहिए।

---

†मूल अंग्रेजी में

†**श्री जवाहरलाल नेहरू:** यह एक आयोजन का प्रश्न है। मेरे विचार से इस समय संसार में किसी भी क्षेत्र में पूंजीवादी, समाजवादी, एवं साम्यवादी कोई ऐसा नहीं है जो आयोजन में विश्वास न करता हो। आयोजन सम्बन्धी दृष्टिकोण भिन्न हो सकता है, यह ठीक है। परन्तु जैसे ही आयोजन का विषय आता है लक्ष्य आवश्यक हो जाते हैं, वे प्राप्य हों चाहे न हों।

उदाहरणार्थ मैं माननीय सदस्य से यह कह सकता हूं कि किसी विवाहित युगल की अगली सन्तान के सम्बन्ध में कोई व्यक्ति यह नहीं कह सकता कि वह पुत्र होगा या पुत्री। परन्तु आंकड़ों के आधार पर आप यह कह सकते हैं कि भारत में इतने लड़के और इतनी लड़कियां होने की सम्भावना है। प्रत्येक व्यक्तिगत मामले में आप पूर्णतः अनिश्चित हैं। इसलिये लक्ष्य यह जानने के लिए निर्धारित किए जाते हैं कि हम क्या करना चाहते हैं। उसमें कुछ हिसाब लगाना होता है कि अच्छे उर्वरकों, अच्छे बीजों अथवा खादों के प्रयोग और अधिक श्रम लगाने से कितना उत्पादन हो सकता है। इसका अनुमान लगाया जा सकता है यद्यपि वह बिल्कुल सही न हो। परन्तु जब बड़ी संख्या होती है तो गलतियां कम हो जाती हैं।

जब आचार्य कृपालानी सदन में अथवा कहीं बाहर भाषण करते हैं तो उनकी बात सम्मानपूर्वक सुनी जानी चाहिये क्योंकि वह न केवल हमारे एक अत्यधिक सम्मानित वयोवृद्ध राजनीतिज्ञ हैं वरन् हमारे एक प्रिय साथी रहे हैं और मैं आशा करता हूं कि अब भी हैं। आचार्य कृपलानी ने कहा कि मैंने सहयोग के लिए अपीलें की थीं परन्तु इस प्रकार की अपील का कोई विशेष महत्व नहीं था। क्योंकि वह अपील परामर्श के स्तर पर सहयोग के लिये थी, किसी कार्य को क्रियान्वित करने के स्तर पर नहीं। उन्होंने कहा कि विरोधी दलों से उन नीतियों के लिए उत्तरदायित्व ग्रहण करने के लिए नहीं कहा जा सकता जिनके कार्यान्वयन में उनका कोई भाग नहीं है। इसलिये उन्होंने कहा कि एक राष्ट्रीय सरकार बनना चाहिए। परन्तु उन्होंने यह स्पष्ट कर दिया कि यह बात वह स्वयं अपनी ओर से कह रहे हैं, अपने दल की ओर से नहीं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि कुछ परिस्थितियों में एक राष्ट्रीय सरकार ही वांछनीय होती है क्योंकि अन्ततः जब हम इन बड़ी समस्याओं पर विचार करते हैं तो कोई भी व्यक्ति केवल दलीय आधार पर सोचने का संकुचित दृष्टिकोण नहीं रखेगा। हमें बड़े बड़े कार्य करने का विशेषाधिकार प्राप्त रहा है और अब इस सदन में बड़ी बड़ी चुनौतियों का सामना करने और हल निकालने का विशेषाधिकार रहा है। इसलिये हमें वह तरीका अपनाना चाहिये जो हमें दूरतम ले जा सके। यही एकमात्र कसौटी है।

परन्तु जब मैं आचार्य कृपालानी के राष्ट्रीय सरकार के प्रस्ताव पर विचार करता हूं तो मेरे मस्तिष्क में राष्ट्रीय सरकार का तात्पर्य और रूप सर्वथा स्पष्ट नहीं होता कि वह कैसी राष्ट्रीय सरकार चाहते हैं। उन्होंने स्वयं अपने भाषण के दौरान प्रजा सोशलिस्ट दल के सम्बंध में चर्चा करते हुए कहा कि उसकी निर्धारित नीति के अनुसार वह कांग्रेस अथवा सरकार के साथ राजनैतिक क्षेत्र में सहयोग नहीं कर सकती। फिर, सम्भवतः राष्ट्रीय सरकार का तात्पर्य विभिन्न दलों की सरकार से है। कौन से दल? इस सदन में बहुमत दल के अतिरिक्त तीन या चार बड़े दल हैं और कुछ स्वतन्त्र सदस्य हैं जो किसी भी दल में नहीं हैं। जो विरोधी पक्ष में हैं वे एक ठोस मोर्चा बना सकते हैं जैसा कि वे कभी कभी सरकार के विरुद्ध करते हैं परन्तु यह बात भली प्रकार ज्ञात है कि विरोधी पक्ष के विभिन्न दलों में गहरे मतभेद हैं और सम्भवतः उनके लिए एक साथ मिलकर काम करना वर्तमान सरकार के इनमें से किसी एक दल से मिल कर काम करने से भी अधिक कठिन होगा। इसलिये ये सारी कठिनाइयां सामने आती हैं।

---

†मूल अंग्रेजी में

हमारे सामने जो बड़े-बड़े कार्य हैं, उनके लिए हमें काम करना होगा। चाहे आयोजन का कार्य हो या योजना को सफल बनाने का कार्य, यदि पूर्णतः नहीं तो कुछ सीमा तक उसके लिये संगठित प्रयत्न की आवश्यकता है, पर यदि समस्या को सुलझाने के दृष्टिकोण में आधारभूत मत-भिन्नता होगी, तो इसका मतलब यह होगा कि प्रत्येक दल दूसरे दलके मार्ग में बाधक बनेगा और कोई लाभप्रद परिणाम नहीं निकलेगा। आचार्य कृपालानी सोचते हैं कि हमारे सामने जब गम्भीर समस्यायें आयेंगी, तो सभी लोग उन पर समुचित दृष्टिकोण से विचार करेंगे और मोटे तौर पर उनके हल के सम्बन्ध में सहमत हो जायेंगे। पर वास्तव में, ऐसा नहीं होता। उन राजनैतिक व्यक्तियों को छोड़ दीजिए जो ईमानदार नहीं है, ईमानदार व्यक्तियों से भी राजनीति में बड़ा मतभेद होता है। उदाहरण के लिये, यदि श्री मसानी हमारी सरकार में हों, तो आप समझिये क्या स्थिति होगी! यदि हम एक दूसरे के प्रति शांतिपूर्ण व्यवहार करें, तो कुछ हद तक हम एक दूसरे को अपने विचारों के अनुकूल परिवर्तित करने या किसी विशेष दिशा की ओर जाने से रोकने का प्रयत्न कर सकेंगे। आज समस्याओं का हल करने के लिए एक प्रकार के सम्मिलित दृष्टिकोण और प्रयत्न की आवश्यकता है। यह सम्मिलित दृष्टिकोण या प्रयत्न संसद्, योजना आयोग तथा अन्य स्थानों पर उत्पन्न किया जाता है।

यदि राष्ट्रीय सरकार बनाने का समय आयेगा या लोग राष्ट्रीय सरकार चाहेंगे तो हम राष्ट्रीय सरकार बना सकते हैं। लेकिन जैसा मैं कह चुका हूं। मैं नहीं समझता कि यह राष्ट्रीय सरकार कैसी होगी? क्या उसका मतलब यह होगा कि इस सभा के सभी दल एक साथ मिल कर काम करेंगे? मैं समझता हूं कि राष्ट्रीय सरकार का स्वरूप ऐसा कादापि नहीं होगा। क्योंकि कुछ दल एक दूसरे से इतने भिन्न हैं कि उनको साथ लाने के लिए कोई भी सम्मिलित आधार नहीं है।

†**आचार्य कृपालानी** : मैं बताना चाहता हूं कि स्वयं कांग्रेस दल में कांग्रेस द्वारा स्वीकृत कुछ मुख्य नीतियों के सम्बन्ध में जितना अधिक मतभेद है उतना इस तरफ के लोगों में नहीं है।

†**श्री जवाहरलाल नेहरू** : आचार्य कृपालानी का कहना बिल्कुल ठीक है। कांग्रेस जैसी बड़ी संस्था में कई प्रकार के मतभेद हैं। पर देश के विभिन्न भागों में जो मतभेद है उसके बारे में मुझे बताने से कोई लाभ नहीं है। कांग्रेस द्वारा निर्धारित नीति का निर्माण धीरे-धीरे होता है; इन मतभेदों के कारण नयी नीति बनाने या पुरानी नीतियों में परिवर्तन करने में काफी समय लग जाता है। यह ठीक है,पर एक बार जब कोई नीति निर्धारित कर दी जाती है, तो लोग उसे स्वीकार कर लेते हैं? यदि सिद्धान्त के आधार पर कोई व्यक्ति उसे स्वीकार नहीं करता, तो मतभेद पैदा होता है और उस व्यक्ति को संस्था छोड़ देना पड़ता है। आचार्य कृपालानी अच्छी प्रकार जानते हैं कि कांग्रेस का इतिहास ऐसा ही रहा है। इस विषय पर मैं सभा का अधिक समय नहीं लेना चाहता। मैं यह बताना चाहता था कि किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

आचार्य कृपालानी जानते हैं कि इस सभा में जितने भी दल और समूह हैं उनमें उनका दल, जहां तक राष्ट्रीय नीति का सम्बन्ध है, अन्य दलों की तुलना में कांग्रेस के अधिक निकट है यहां एक दल है जिसके सदस्यों की संख्या थोड़ी ही है और जिसने हमेशा अवज्ञा या सत्याग्रह आदि करने की नीति निर्धारित कर रखी है। उदाहरण के लिये कलकत्ते शहर को लीजिए। कलकत्ते को जलूसों का शहर कहा जाना चाहिये। जलूस निकालने के लिये कोई बहाना ढूंढ़ लेना बहुत आसान काम है। पर मुझे बताया गया है कि बिना किसी कारण के भी वहां जलूस निकला करते हैं। गन्ने के मूल्य के सम्बन्ध में अभी हाल में उत्तर प्रदेश में सत्याग्रह हुआ—उसके कारणों आदि का उल्लेख मैं नहीं करना चाहता—

†मूल अंग्रेजी में

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

पर मैं यह कहना चाहता हूं कि इस प्रकार का रवैया और इस प्रकार के दृष्टिकोण हमारी परिस्थिति से मेल नहीं खाते। मैं आचार्य कृपालानी से निवेदन करना चाहता हूं कि हरेक काम समय आने पर ही होता है। मैं समझता हूं कि सरकारी सहयोग के अतिरिक्त अन्य प्रकार के सहयोग के लिये इस समय अनेक सम्भावनायें हैं। मैं यह नहीं कह रहा हूं कि कोई चीज़ असम्भव है, क्योंकि हमें यदि कुछ करना है तो उसके लिए समुचित आधार निर्मित करना पड़ेगा क्योंकि हम कोई बनावटी स्थिति पैदा नहीं कर सकते।

सर्वप्रथम आयोजन की बात लीजिए, यह सब से महत्वपूर्ण प्रक्रम है। जहां तक कार्यान्विति का संबंध है, इस की देखभाल का काम सरकार पर है, पर अन्ततः कार्यान्विति का कार्य अनेक सरकारी पदाधिकारियों द्वारा किया जाता है। अतः आयोजन स्तर पर तथा कार्यान्विति के अन्य विभिन्न स्तरों पर हम सहयोग कर सकते हैं। सामुदायिक विकास खंडों को लीजिये।

†**श्री पु० र० पटेल** : जिला स्तर पर सारा एकाधिकार कांग्रेस के लोगों के हाथों में होता है। अन्य लोगों का सहयोग नहीं लिया जाता। हम कैसे कह सकते हैं कि अन्य लोगों का सहयोग लिया जाता है ?

†**श्री जवाहरलाल नेहरू** : मैं ने जिला स्तर की बात नहीं कही। पर यदि जिला स्तर पर सहयोग नहीं लिया जाता तो यह बुरी बात है और वहां भी सहयोग लिया जाना चाहिए। जिला स्तर पर सहयोग लेने की बात का अर्थ मैं नहीं समझ सका। सामुदायिक विकास खण्डों, पंचायतों तथा सहकारी समितियों में सहयोग किया जा सकता है। जहां तक सहयोग का प्रश्न है श्री मसानी को यह जानकर आश्चर्य होगा कि हमने इस बात पर बहुत जोर दिया है कि पंचायतों तथा सहकारी संस्थाओं के कार्य संचालन में जब तक बहुत आवश्यक न हो, सरकारी दबाव की कौन कहे सरकारी मार्ग दर्शन भी न दिया जाये। हम उन्हें आत्मनिर्भर संस्थायें बनाना चाहते हैं। यदि हम उच्च स्तर पर मिल जुल कर कार्य करने का प्रयत्न करें—आयोजन तथा उसके विभिन्न स्तरों पर—तो सहयोग बढ़ेगा और आगे चल कर उसकी और भी वृद्धि होगी।

मैंने सभा का काफी समय ले लिया है। पर बेरूबाड़ी यूनियन के संबंध में बात करते समय कल श्री घोष ने जो जानकारी मांगी थी, उसके संबंध में भी मैं कुछ बताना चाहता हूं। सर्वप्रथम, मैं कहना चाहता हूं कि ऐसे मामलों में जनता की जो भावना होती है उसकी गहराई को हम अनुभव करते हैं। फिर बंगाल में ऐसी भावना का पैदा होना तो बिल्कुल स्वाभाविक है। मैं उन्हें आश्वासन देता हूं कि इस मामले पर हम संवैधानिक, कानूनी तथा अन्य दृष्टिकोणों से फिर विचार करवायेंगे। इस मामले में माननीय सदस्य ने राज्य सरकार से परामर्श करने की जो बात कही थी, उसके संबंध में मेरे सामने कठिनाई है क्योंकि मैं देखता हूं कि अन्य स्थानों पर इस संबंध में जो विचार प्रकट किये गये हैं, मेरे विचार उन विचारों से भिन्न हैं। मैं यह नहीं कहता कि अमुक व्यक्ति ने भी जानबूझ कर अमुक बात कही है और वह सही नहीं है। पर इतना मैं अवश्य कहूंगा कि इस मामले के संबंध में काफी गलतफहमी है। ऐसे मामले में यह बात असंभव है कि सम्बद्ध सरकार के प्रतिनिधियों की सहमति के बिना कोई भी व्यक्ति कोई भी निश्चय कर ले।

---

†मूल अंग्रेजी में

इस मामले के संबंध में मैं अधिक नहीं कहना चाहता । माननीय सदस्य ने इस संबंध में कुछ आंकड़े मांगे थे । पहले किये गये करारों तथा बागे पंचाट के अनुसार १५ जनवरी को कुछ क्षेत्रों का विनिमय किया गया । २६.४ वर्गमील का क्षेत्र जो भारत के अधीन था पाकिस्तान को दिया गया । और १३.२ वर्ग मील का क्षेत्र जो पाकिस्तान के अधीन था भारत को मिला । यह विनिमय हो चका है ।

कूच-बिहार की बस्तियों के सम्बन्ध में स्थिति यह है कि भारत के अधीन २९ वर्गमील का क्षेत्र पाकिस्तान को दिया जाना है और १८ वर्गमील का क्षेत्र जो पाकिस्तान के अधीन है भारत को प्राप्त होना है । जहां तक बेरुबाड़ी यूनियन का संबंध है यहां ४.३ वर्गमील का क्षेत्र है और लगभग आधे वर्गमील का क्षेत्र २४ परगने में है ।

†**श्रीमती रेणु चक्रवर्ती** (बसिरहाट) : हम यह जानना चाहते हैं कि क्या बागे न्यायाधिकरण के सामने पाकिस्तान ने बेरुबाड़ी के मामले को विवाद के रूप में उठाया था और यदि पाकिस्तान ने उस समय इस मामले को विवाद का रूप में नहीं उठाया था तो बाद में इस मामले को विवाद के रूप में क्यों उठाया गया या हमारी सरकार ने इस मामले को विवाद के रूप में क्यों स्वीकार किया ?

†**श्री जवाहरलाल नेहरू** : इस मामले को बागे न्यायाधिकरण के सामने नहीं उठाया गया था । यह बात सच है । बाद में इस विवाद को बार-बार उठाया गया और सच पूछा जाये तो बाद में सीमा संबंधी जो झगड़े पैदा हुए वे इसी विवाद के फलस्वरूप हुए हैं । इस विषय पर सभा को पूरी तरह से विचार करने का अवसर आगे प्राप्त होगा ।

मैं अनेक मामलों की चर्चा कर चुका हूं और अब मैं राष्ट्रपति के अभिभाषण की मुख्य-मुख्य बातों, अर्थात्, आयोजन, तीसरी पंचवर्षीय योजना, पिछली सफलताओं तथा आगे के लक्ष्यों को लूंगा । मैं बताना चाहता हूं कि हम लोगों से जो त्रुटियां हुई हैं और हमारे सामने—प्राकृतिक तथा अन्य—जो भी विपत्तियां आई हैं जिनका हमें सामना करना पड़ा, उनके होते हुये भी गत कुछ वर्षों में उत्पादन आदि में जो प्रगति हुई है वह काफी अच्छी रही है । उत्पादन के संबंध में मेरा कहना है कि कृषि तथा औद्योगिक दोनों क्षेत्रों में—क्योंकि ये दोनों मूल आधार हैं जिन पर अन्य बातें निर्भर करती हैं—उत्पादन में काफी उन्नति हुई है । मैं यह नहीं कहता कि हमें केवल इन्हीं पर ध्यान देना चाहिए, हमें अन्य बातों पर भी ध्यान देना है । हमारे सामने सब से बड़ी बात यह है कि यदि हमारे उत्पादन में २ प्रतिशत प्रति वर्ष वृद्धि होती रहे तो हम अपनी स्थिति को वर्तमान जैसा ही बनाये रख सकते हैं । अतः २ प्रतिशत से अधिक होने वाली उन्नति को ही हम वास्तविक उन्नति कह सकते हैं । मैं विश्वास करता हूं कि पिछले कुछ वर्षों से हमारी उन्नति लगभग ६ प्रतिशत वार्षिक रही है यद्यपि गत दो वर्षों में उन्नति कुछ कम हुई है पर यदि आप सम्पूर्ण काल का सिंहावलोकन करें तो आप देखेंगे कि कुल उन्नति ६ प्रतिशत से कम नहीं रही है । गत दो वर्षों में उत्पादन कम रहा है विशेषतया कृषि का । मूल बात यह है कि हमें कृषि तथा उद्योग दोनों क्षेत्रों में लगभग ६ प्रतिशत वार्षिक के आधार पर उन्नति करनी है ।

उद्योग के सम्बन्ध में, इस बात को ध्यान में रखते हुये कि आपने कितनी पूंजी लगाई है और उसके बदले में आप को कितना लाभ मिला है, कोई भी व्यक्ति हमारी उन्नति का अनुमान लगा सकता है । कृषि के संबंध में ऐसा ठीक ठीक अनुमान लगाना कुछ कठिन है ।

---

†मूल अंग्रेजी में

[श्री जवाहर लाल नेहरू]

फिर भी हमारी वर्तमान फसल के अच्छे होने को छोड़ कर अन्य लक्षणों से भी यह पता लगता है कि भूतकाल में हम ने जो परिश्रम किया है उसका फल हमें अब मिल रहा है। अन्य बतों के साथ साथ कृषि संबंधी उत्पादन बढ़ाने के लिए सामुदायिक विकास आन्दोलन में और भी अधिक तेजी लाई गई है और उसके अच्छे परिणाम हो रहे हैं। इन सब बातों से अधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि हमारे राज्यों के राज्य कृषि विभाग इस बात के प्रति पूर्णतः सजग हो गये हैं कि उन्हें क्या कार्य करना है, जिसके सम्बन्ध में पहले वे शायद इतने सजग नहीं थे। अतः स्पष्ट है कि आगे प्रगति करने के लिये हमें कुछ प्रयत्न करने होंगे। यद्यपि प्रयत्नों के ब्योरों के संबंध में हम में मतभेद हो सकता है पर यदि हम प्रयत्नों में कमी करेंगे तो प्रगति करने की कोन कहे हम वहीं के वहीं रहेंगे जहां हम हैं।

संसाधन भारत में हैं ही। पिछले कुछ वर्षों के अनुभव से यह निश्चित है कि हम उनके विकास के लिए प्रयत्न करेंगे पर स्पष्ट है कि इन कामों के लिए महान प्रयत्न की आवश्यकता है। मैं समझता हूं कि श्री खाड़िलकर ने एक नये दृष्टिकोण की बात कही थी। प्रश्न यह नहीं है कि उसी कार्य को अधिक प्रयत्न से किया जाये बल्कि प्रश्न यह है कि उस कार्य को एक नये दृष्टिकोण से किया जाये। और केवल उद्योग में ही नहीं कृषि में भी इस नवीन दृष्टिकोण को अपनाने की आवश्यकता है। कृषि के संबंध में इस नवीन दृष्टिकोण को प्रभावी बनाने के उद्देश्य से ही कांग्रेस ने इस विषय में संकल्प पारित किये थे।

अब मैं तथाकथित सरकारी क्षेत्र के संबंध में कुछ कहना चाहता हूं। कभी कभी मैंने गैर-सरकारी क्षेत्र की आलोचना की है—वास्तव में गैर-सरकारी क्षेत्र की नहीं, बल्कि कुछ व्यक्तियों की जिन्होंने कहा कि वे गैर-सरकारी क्षेत्र की ओर से बोल रहे हैं। कुछ ऐसे व्यक्ति हैं जो—गैर-सरकारी क्षेत्र के लिए वे जो कुछ करते हैं उसके होते हुये भी—गैर-सरकारी क्षेत्र के लिए विशेष लाभदायक नहीं है। वे अपने भाषणों द्वारा गैर-सरकारी क्षेत्र के विरुद्ध एक द्वेषपूर्ण भावना पैदा करते हैं। अपने कार्यों द्वारा कभी कभी वे जनता पर बिल्कुल उल्टा प्रभाव डालते हैं। हमारे देश में भाषण देने की स्वतंत्रता है, चाहे भाषण तर्कपूर्ण और विद्वतापूर्ण हो या न हो। पर मैं समझता हूं कि कुछ लोग हर बात को इस कसौटी पर रख कर देखते हैं कि अमुक चीज का राष्ट्रीयकरण कर दिया गया है या अमुक चीज का राष्ट्रीयकरण किया जाने वाला है। मैं समझता हूं कि इन समस्याओं के प्रति ऐसे दृष्टिकोण अपरिपक्क हैं।

[अध्यक्ष महोदय पीठासीन हुये]

कुछ और चीजों का राष्ट्रीयकरण करना अच्छा भी हो सकता है और बुरा भी। राष्ट्रीयकरण किया जाना या न किया जाना स्वयं उन चीजों पर निर्भर होता है। पर आज आवश्यकता इस बात की है कि हम अपना उत्पादन बढ़ायें और ऐसे ढंग से बढ़ायें कि एकाधिकारवादी नियंत्रण कम हो और धीरे धीरे एक शक्तिशाली समाजवादी आधार का निर्माण हो। यह कहना गलत है कि कोई विदेशी सरकार हमें कुछ करने के लिए मजबूर कर सकती है। हम किसी बात पर सहमत हो जायें यह एक दूसरी बात है। इस बात का निर्णय तो हम स्वयं करते हैं कि अमुक बात से हम सहमत हों या न हों। यह कहना कि गैर-सरकारी क्षेत्र हम पर दबाव डालता है, सच नहीं है। गेर-सरकारी क्षेत्र का महत्व है पर वह सरकार को अपनी नीति से डिगा नहीं सकता। मैं समझता हूं कि गैर-सरकारी क्षेत्र

इस बात को काफी मात्रा में महसूस करता है---यह बात मैं सबके लिए नहीं कह रहा हूं पर मोटे तौर से उनमें से अधिकांश लोग इस बात को समझते हैं । यद्यपि मैं ने उनकी कटु आलोचना भी की है, लेकिन मैं यह कहूंगा कि उनमें से अधिकांश ने सरकार के साथ सहयोग करने का यथाशक्ति प्रयत्न किया है ।

यदि हम गैर-सरकारी क्षेत्र या किसी अन्य क्षेत्र के प्रति कड़ा रुख अख्तियार करते हैं तो इससे हमें कुछ लाभ नहीं होगा । जैसा कि मैं कह चुका हूं कि मैं महसूस करता हूं कि भारत में गैर-सरकारी क्षेत्र के लिए बहुत बड़ा क्षेत्र पड़ा है और वह बहुत कुछ कर सकता है । मैं समझता हूं कि इस समय गैर-सरकारी क्षेत्र को बाहर ढकेल देना बिल्कुल गलत, हानिकारक तथा घातक होगा और आगे काफी समय तक भी ऐसा करना गलत होगा पर मैं नहीं चाहता कि गैर-सरकारी क्षेत्र का देश की अर्थ-व्यवस्था में किसी प्रकार का सर्व-प्रमुख स्थान हो । मैं चाहता हूं कि इसकी जो बुराइयां हैं उन पर नियंत्रण किया जाये क्योंकि बुराइयां मौजूद हैं । मैं चाहता हूं कि इस प्रकार की एकाधिकारवादिता को प्रोत्साहन न दिया जाये बल्कि निरुत्साहित किया जाये और योजना आयोग की मोटी योजना यही है ।

अतः तीसरी पंचवर्षीय योजना के प्रति इस प्रकार का दृष्टिकोण आज का महत्वपूर्ण विषय है । दूसरी योजना के शेष दो वर्षों के सम्बन्ध में यही दृष्टिकोण अपनाया गया है और स्पष्ट है कि भविष्य में यही दृष्टिकोण अपनाया जायेगा । इसलिए अनेक मामलों में, खासकर इस मामले में काफी परामर्श की आवश्यकता है । यह एक बहुत महत्वपूर्ण बात है कि हमारी तीसरी योजना किस प्रकार की हो, क्योंकि देश की, योजना आयोग की तथा इस सभा की मूल विचार धारा इस पर निर्भर है । साथ ही, जैसा कि आप जानते हैं कि यह कोई अनेक परियोजनाओं के संग्रह या आयोजन करने की समस्या नहीं है, बल्कि यह तो कहीं गंभीर बात है ।

†**श्री जयपाल सिंह** : (रांची पश्चिम---रक्षित---अनुसूचित आदिम जातियां) : कृषि उत्पादन के सम्बन्ध में सहकारिता पर प्रधान मंत्री ने जो विचार रखे हैं, उसके बारे में मैं एक बात पूछना चाहता हूं । उन्होंने कहा कि सहकारिता का कार्य स्वेच्छा के आधार पर होगा । मैं देखता हूं कि मेरे राज्य बिहार में चकबन्दी अधिनियम है और वहां अनिवार्य रूप से चकबन्दी करने का, बिना किसी सफलता के, प्रत्यन किया गया और कम से कम दक्षिणी बिहार में उसको वापस ले लिया गया है । मैं जानना चाहता हूं कि यह कार्य स्वेच्छा के आधार पर क्यों नहीं किया जा रहा है ?

†**श्री जवाहरलाल नेहरू** : यदि किसी गांव में संयुक्त कृषि की व्यवस्था है तो चकबन्दी की आवश्यकता नहीं है पर चूंकि संयुक्त कृषि प्रणाली तुरन्त ही लागू नहीं की जा रही है अतः चकबन्दी का होना महत्वपूर्ण है । चकबन्दी के काम को आगे बढ़ाना अत्यावश्यक है । इससे लाभ होगा । चकबन्दी अनिवार्य होनी चाहिए क्योंकि . . . . . .

†**श्री जयपाल सिंह** : पर लोग इसका विरोध कर रहे हैं ।

†**श्री जवाहरलाल नेहरू** : यह एक भिन्न बात है । अनिवार्य का अर्थ है कि उसके लिये एक कानून पारित किया जाये । उसे लागू करने में सहयोग, समझदारी तथा जनता को समझा बुझा कर काम किया जाना चाहिए क्योंकि माननीय सदस्य जानते हैं कि चकबन्दी का अर्थ यह नहीं है कि

---

†मूल अंग्रेजी में

[श्री जवाहर लाल नेहरू]

किसी व्यक्ति को उसकी भूमि से वंचित कर दिया जाये बल्कि चकबन्दी का अभिप्राय यह है कि उसकी भूमि को उस क्षेत्र के अन्य व्यक्तियों की भूमि के साथ मिला दिया जाये । यह सच है कि इस काम को परस्पर सहयोग तथा सद्भावना से किया जाना चाहिए पर इसके पीछे एक विधि का होना आवश्यक है अन्यथा यह काम बिल्कुल भी नहीं हो पायेगा ।

†**अध्यक्ष महोदय :** इस प्रस्ताव पर २०९ संशोधन हैं । क्या कोई माननीय सदस्य अपना संशोधन मतदान के लिए रखवाना चाहते हैं ?

†**श्री नौशीर भरूचा** (पूर्व खानदेश) : मैं अपने संशोधन संख्या १५ पर मतविभाजन चाहता हूं ।

†**अध्यक्ष महोदय :** मध्यान भोजन काल में हम मत विभाजन नहीं करते । अतः अब यह मामला ३ बजे या साढ़े तीन बजे लिया जायेगा ।

कामगर प्रतिकर (संशोधन) विधेयक

†**श्रम उपमंत्री (श्री आबिद अली) :** मैं प्रस्ताव करता हूं कि :

"कि कामगर प्रतिकर अधिनियम, १९२३, में अग्रेतर संशोधन करने वाले विधेयक पर, राज्य-सभा द्वारा पारित किये गये रूप में, विचार किया जाये ।"

कामगर प्रतिकर अधिनियम में अब काफ़ी समय से व्यापक परिवर्तन की आवश्यकता थी अतः संशोधन सम्बन्धी बहुत से प्रस्तावों पर विचार किया गया और उनकी जांच की गई । इसमें संशोधन करने के लिये दो महत्वपूर्ण प्रस्ताव हैं । एक तो प्रतिकर की वर्तमान दरों में संशोधन करने दूसरा अधिनियम में दी गई मजदूरी की अधिकतम सीमा को ४०० रु० से बढ़ाकर ५०० रुपये कर देने के बारे में हैं । इन दोनों प्रस्तावों को जीवनांकिक समिति को भेज दिया गया है ताकि वे इस बात की जांच करें कि इनका उद्योगों के वित्त पर क्या प्रभाव पड़ेगा । समिति ने अभी हाल ही में अपना प्रतिवेदन दिया है जिसकी जांच की जा रही है । इस विधेयक में अन्य दूसरे प्रस्ताव हैं । मैं सभी प्रस्तावों की विस्तृत चर्चा न करके संक्षेप में उनके बारे में बताऊंगा ।

आजकल, एक अवयस्क को काम करते समय उसकी मृत्यु हो जाने अथवा सदैव के लिए अपंग हो जाने पर उसे एक निश्चित राशि प्रतिकर के रूप में दी जाती है जबकि एक वयस्क को, इसी प्रकार की परिस्थितियों में दिये जाने वाले प्रतिकर का प्राक्कलन उसकी मासिक मजदूरी के आधार पर लगाया जाता है । प्रतिकर की दर जोड़ने के मामलों में यह विधेयक वयस्क तथा अवयस्क के इस भेद को दूर करता है । तथा दोनों को समान स्तर देता है ।

आजकल एक कामगर को अस्थायी अपंग होने के दौरान में पहले सात दिन तक उसे कुछ नहीं दिया जाता किन्तु इस विधेयक में यह समय घटा कर सात दिन की अपेक्षा तीन दिन कर दिया गया है ।

इस विधेयक में यह व्यवस्था की गई है कि यदि नियोजक द्वारा एक महीने तक प्रतिकर नहीं दिया जाता तो उसे इस अवधि के पश्चात् ६ प्रतिशत के हिसाब से ब्याज देना होगा । यदि

---

†मूल अंग्रेजी में